Vol 4 Issue 3 April 2014

ISSN No : 2230-7850

International Multidisciplinary Research Journal

Indian Streams Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-Chief
H.N.Jagtap

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2230-7850**

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

International Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Catalina Neculai
University of Coventry, UK

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Horia Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest,Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

......More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.net

Indian Streams Research Journal
ISSN 2230-7850
Volume-4 | Issue-3 | April-2014
Available online at www.isrj.net

भारतीय परंपरा में आत्म तत्व संबंधी विचार

ललित मोहन जोशी

शोध छात्र, शिक्षा संकाय, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, एस. एस. जे. परिसर, अल्मोड़ा।

सारांश :-

व्यक्तित्व का सम्प्रत्यय ज्ञान की अनेक शाखाओं के अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय है। दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान तथा शिक्षाशास्त्र के अध्येताओं द्वारा अपने–अपने दृष्टिकोण के अनुसार इसकी व्याख्या एवं विवेचना की गई है। आत्म एवं व्यक्तित्व एक दूसरे से गहन रुप से सम्बंधित हैं। अतः व्यक्तित्व की व्याख्या हेतु आत्म का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है। शोधकर्ताओं द्वारा किये गये आत्म संबंधी अध्ययनों से यह पुष्टि हो चुकी है कि "आत्म" व्यक्तित्व का केन्द्र है। व्यक्तित्व के विकास के लिये आत्म प्रत्यय का विकास अत्यावश्यक है। आत्म प्रत्यय संबंधी वर्तमान मनोवैज्ञानिक ज्ञान पाश्चात्य देशों की देन है। परंतु इस से यह निष्कर्ष निकालना सर्वथा अनुपयुक्त है कि भारतीय परंपरा में इसका अभाव है। पाश्चात्य मनोविज्ञान में प्रचलित आत्म संप्रत्यय (Self Concept) को भारतीय परंपरा में आत्मा अथ्वा आत्म (Soul) के रुप में प्रयुक्त किया गया है। भारतीय परंपरा में आत्म तत्व का विवेचन न केवल शरीरशास्त्रीय दृष्टिकोण से किया गया है अपितु इस से भी परे भावातीत अवस्था तक किया गया है। इस अवस्था का बोध व्यक्ति को अपने वातावरण से अनुकूलन करने के योग्य ही नहीं बनाता अपितु उसे अपने वातावरण पर नियंत्रण करने एवं उसके स्वरुप में परिवर्तन करने की क्षमता भी प्रदान करता है। प्रस्तुत शोधपत्र में उपनिषदों एवं श्रीमद्भगवतगीता के आधार पर भारतीय परंपरा में निहित आत्म तत्व की विवेचना की गई है।

प्रस्तावना :

"आत्म" मनोविज्ञान के महत्वपूर्ण सम्प्रत्ययों में से एक है। यह प्रत्यय "व्यक्तित्व" के संबध में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। क्योंकि व्यक्तित्व रूपी "भवन" आत्म रूपी "नींव" पर ही आधारित होता है। बर्न्स (1980) ने आत्म को इस प्रकार परिभाषित किया है,–"हम अपने बारे में क्या सोचते हैं, दूसरे लोग हमारे बारे में क्या सोचते हैं तथा हम क्या होना चाहते हैं, इन सभी की समग्र छवि को आत्म कहते हैं"। आत्म संबधी अध्ययन प्रारंभ से ही महान दार्शनिकों एवं मनोवैज्ञानिकों का रूचिपूर्ण विषय रहा है चाहे वह ग्रीक दार्शनिक सुकरात द्वारा "स्वंय" को जानों (Know Thyself) का उदघोष हो या फिर अस्तित्ववादियों द्वारा अपने अस्तित्व की खोज संबंधी विचार। मनोविज्ञान रूपी वृक्ष का उद्भव दर्शनशास्त्र रूपी विचार सम्पन्न उर्वर भूमि में हुआ है, यही कारण है कि इन दोनों ही विषयों के अन्तर्गत आत्म संबंधी सम्प्रत्यय को समान महत्व प्रदान किया जाता है। मनोविज्ञान के जनक विलियम जेम्स के "आत्म" संबंधी दृष्टिकोण में दर्शन तथा मनोविज्ञान का सम्मिलित प्रभाव दृष्टिगोचर होता है, जिसमें उन्होंने आत्म को पदानुक्रम के रूप में व्यवस्थित किया है जो कि इस प्रकार है–

1.भौतिक अथवा सांसारिक आत्म (Material Self)
2.सामाजिक आत्म (Social Self)
3.आध्यात्मिक आत्म (Spiritual Self)

विलियम जेम्स का यह दृष्टिकोण भारतीय दर्शन के आत्मानुभूति संबंधी विचार की ओर दिशानिर्देश प्रदान करता हुआ प्रतीत होता है। यद्यपि जेम्स का आध्यात्मिक आत्म, भारतीय परंपरा में प्रयुक्त आत्म (वनस) का पर्याय नहीं है और न ही आत्मानुभूति संबंधी प्रत्यय जेम्स के दृष्टिकोण तक ही सीमित है। अपितु यह इससे कहीं अधिक व्यापक है।

वैदिक साहित्य के अंतर्गत वेद, वेदांग, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद तथा षड्दर्शन इत्यादि को सम्मिलित किया गया है। इनकी उपयोगिता धर्म एवं दर्शन तक ही सीमित नहीं है अपितु ज्ञान के सभी क्षेत्रों में इनका समान महत्व है। मनोविज्ञान का वर्तमान स्वरूप पाश्चात्य देशों की देन है परंतु इससे इस निष्कर्ष पर पहुंचना सर्वथा अनुपयुक्त है कि वैदिक साहित्य में इसका अभाव है। विशेषकर उपनिषद, षड्दर्शन एवं श्रीमद्भगवतगीता मनोवैज्ञानिक तत्वों से परिपूर्ण है। इन सभी में "आत्मतत्व" पर विस्तृत विवेचना की गयी है। भारतीय परंपरा में

आत्मोपलब्धि को मनुष्य जीवन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य एवं कर्तव्य के रूप में निर्धारित किया गया है, यथा–

"अयमेव परो धर्मो यद् योगेनात्मदर्शनम्"
अर्थात् यह हमारा परम कर्तव्य है कि हम योग के द्वारा आत्म का दर्शन करें।

आत्मदर्शन के महत्व को स्पष्ट करते हुए बृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है–

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो,
आत्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्"

अर्थात यह आत्मा दर्शन, श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन करने योग्य है। इस आत्मा के दर्शन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन से सभी का ज्ञान हो जाता है। आत्मा की अनुभूति अनायास ही नहीं होती। इसकी प्राप्ति एक निर्धारित कम के अनुसरण से ही संभव है। इस कम में चार चरण निहित हैं जो कि इस प्रकार हैं–

1.शारीरिक स्व
2.सामाजिक स्व
3.बौद्धिक स्व तथा
4.आध्यात्मिक स्व

शारीरिक स्व मनुष्य के भौतिक शरीर का पर्याय है। इसकी उत्पत्ति पंचमहाभूतों अर्थात पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु से मानी गई है। भारतीय दर्शन में मनुष्य के शारीरिक पक्ष को महत्व प्रदान करते हुए इसे सभी धर्मों का साधन माना गया है। ("शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्") तथा उचित साधनों से इसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की अपेक्षा की गई है यथा–

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

अर्थात उपयुक्त आहार, विहार, चेष्टाओं एवं कर्म करने से, उचित समय में शयन एवं जागरण से तथा योगाभ्यास से समस्त शारीरिक दुःखों से मुक्ति संभव है।

आत्मानुभूति का द्वितीय चरण सामाजिक स्व है। यह सामाजिक संबंधों में व्याप्त रहता है। सामाजिक स्व के अन्तर्गत व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करे। समाज में रहते हुए व्यक्ति को इस प्रकार के कार्य करने चाहिए जिससे वह प्रशंसा का पात्र बन सके। श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन से लोक निन्दा की बात सामाजिक स्व के परिप्रेक्ष्य में की है।

अथ चेत्तवमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि।।
अकीर्तिं चापि भूतानिकथयिष्यन्ति ते•व्ययाम्।
सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते।।

सामाजिक स्व के पश्चात मनोवैज्ञानिक स्व आता है। इस स्तर पर व्यक्ति प्रशंसा व निंदा के प्रति उदासीन हो जाता है। इस स्थिति को गीता में स्थिरप्रज्ञ कहा गया है।

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।

स्थिरप्रज्ञ अवस्था को प्राप्त व्यक्ति मनोवैज्ञानिक स्व के स्तर से उठकर "आध्यात्मिक स्व" की अनुभूति में समर्थ हो जाता है। भारतीय दर्शन में इस स्थिति का वर्णन आनन्दानुभूति के रूप में किया गया है।

वैदिक साहित्य आत्मज्ञान से परिपूर्ण है। इसका केन्द्रीय विषय आत्म है। तैत्तिरीय उपनिषद में आत्मतत्व विवेचन का विशद् वर्णन प्राप्त होता है। इस उपनिषद में आत्म को पंचकोषों के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। आद्य शंकराचार्य ने विवेक चूड़ामणि में पंचकोषों का विवेचन करते हुए यह मत व्यक्त किया है– अन्न से उत्पन्न यह देह ही अन्नमयकोष है जो अन्न से जीवित रहता है तथा उसके अभाव में नष्ट हो जाता है, यह त्वचा, मांस, रूधिर, अस्थि तथा मल का समूह है जो कि नित्य शुद्ध आत्मा नहीं हो सकता। इस विकार युक्त देह में मूढ़जन ही आसक्ति रखते हैं विद्वजन नहीं। जिस प्रकार छाया, स्वप्न तथा कल्पना यथार्थ नही होते उसी प्रकार यह स्थूल शरीर भी यथार्थ नहीं होता।

पांच प्राण तथा पांच कर्मेन्द्रियों के संयोग से प्राणमय कोष का निर्माण होता है। पंचप्राणों में से "प्राण वायु" हृदय में, "अपान वायु" गुदा

में "समान" नाभि में "उदान" कण्ठ में तथा "व्यान" संपूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है। आद्य शंकराचार्य ने प्राणमय कोष का विवेचन करते हुए कहा है कि प्राणमय कोष से युक्त होकर ही अन्नमय कोष (स्थूल शरीर) समस्त कर्मों में प्रवृत्त होता है। इस के उपरान्त उन्होंने स्पष्ट किया है कि यह प्राणमय कोष भी आत्मा नहीं है। यह वायु का विकार है तथा उचित–अनुचित, अपने–पराये से अनभिज्ञ है।

मनोमय कोष नामक तृतीय कोष का निर्माण पंचज्ञानेन्द्रियों तथा मन के संयोग से होता है। विवेकचूड़ामणि में इस कोष का वर्णन करते हुए कहा गया है कि ज्ञानेन्द्रियों और मन के संयोग से ही मनोमय कोष का निर्माण होता है तथा यही "मैं", "मेरा" आदि विकल्पों का हेतु है। बुद्धि एवं ज्ञानेन्द्रियों के संयोग से विज्ञानमय कोष का निर्माण होता है। आद्य शंकराचार्य के मतानुसार यह अहं स्वभाव से युक्त विज्ञानमयकोष जीव और जगत के समस्त व्यवहारों का निर्वाह करने वाला है। यह कर्म करता है तथा उनके फल भोगता है। जाग्रत, स्वप्न आदि अवस्थाएँ सुख–दुख, भोग, देह के प्रति अभिमान तथा मोह इत्यादि इसी कोष में निवास करते हैं।

आनन्दमय कोष, "कारण शरीर" में स्थित होता है। यह आनन्द से परिपूर्ण होता है। आद्य शंकराचार्य ने इस कोष का वर्णन करते हुए यह कहा है कि आनन्दस्वरूप आत्मा से प्रतिबिम्बित तथा तमो गुण से प्रकट हुई वृत्ति आनन्दमय कोष है। वह प्रिय आदि गुणों से युक्त है। यह अपने अभीष्ट पदार्थ के प्राप्त होने पर प्रकट होती है। इसका अनुभव भाग्यवान व्यक्ति को उसके द्वारा किये जाने वाले पुण्यकर्मों का फल प्राप्त करके होता है। जाग्रत एवं स्वप्न अवस्था में इसकी सूक्ष्म अनुभूति होती है तथा सुषुप्ति अवस्था में इसकी तीव्र अनुभूति होती है। यह आनन्दमय कोष भी आत्मा नहीं है क्योकि यह उपाधियुक्त है, प्रकृति का विकार है, शुभकर्मों का कार्य है तथा प्रकृति के विकारों के समूह पर आश्रित है। इन पंचकोषों से परे बोध स्वरुप शेष रहता है, वही आत्म है। इस प्रकार जो आत्मा स्वयंप्रकाशित, पंचकोषों से पृथक होकर भी निर्विकार, निर्मल और नित्यानन्दस्वरूप है, वही वास्तविक आत्मा है।

माण्डूक्य उपनिषद में चेतना के संदर्भ में आत्मा की चार अवस्थाओं का वर्णन किया गया है। ये अवस्थाऐं जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति तथा तुरीयावस्था हैं। आत्मा की पहली अवस्था "जागृत" अवस्था है। इस अवस्था में मन, ज्ञानेन्द्रियों की सहायता से बाह्य वातावरण का ज्ञान प्राप्त करता है। इस अवस्था में आत्मा शरीर पर निर्भर होती है तथा स्थूल पदार्थों का भोग करती है। स्वप्नावस्था आत्मा की द्वितीय अवस्था है। इसमें चेतना का संबध बाह्य वातावरण से न होकर आंतरिक पक्ष से होता है। जागृत एवं स्वप्न अवस्था के मध्य में यह अंतर है कि जागृत अवस्था में मन बाह्य जगत के प्रत्यक्ष ज्ञान पर निर्भर होता है परंतु स्वप्नावस्था में यह आंतरिक अनुभवों से सम्बद्ध होता है। इस प्रक्रिया में मन पूर्व की जागृत अवस्था में प्राप्त की गई सामग्री का प्रयोग करता है।

आत्मा की तृतीय अवस्था का नाम "सुषुप्ति" है। यह प्रगाढ़ निद्रा की अवस्था है। इसमें न तो कोई इच्छा शेष रहती है और न ही स्वप्न । इस अवस्था में जीव प्रत्येक प्रकार की इच्छाओं एवं कष्टों से मुक्त हो जाता है।

आत्मा की उपर्युक्त तीनों अवस्थाएँ एक अन्तिम अवस्था में सम्मिलित होती हैं। इस अवस्था को तुरीय अवस्था कहा गया है। यह अवस्था सुषुप्त अवस्था से इसलिए पृथक एवं उच्च है क्योंकि सुषुप्त अवस्था दुखों के अभाव की अवस्था है परंतु आत्मा केवल दुखों का अभाव ही नहीं है अपितु यह आनन्दस्वरूप है। आत्मा के भीतर विश्व के सभी पदार्थों का ज्ञान समाहित होता है। इसके परे कुछ नहीं है। यह सदैव अपरिवर्तित रहने वाली सत्ता है जो परिवर्तनों के मध्य भी सदैव स्थिर रहती है। इसका न कोई आदि है और न ही कोई अंत। इसके द्वारा ही उन सभी पदार्थों का बोध होता है जिनका आदि भी है और अन्त भी। इसी कारण तुरीय अवस्था को पूर्वोक्त तीनों अवस्थाओं का साक्षी तथा सर्वोच्च माना गया है।

भारतीय मनोविज्ञान में आत्म का विभाजन चार भागों के अन्तर्गत किया गया है। इनमें से तीन कमशः वैश्वानर, तैजस तथा प्राज्ञ हैं। इनका आत्मा की अवस्थाओं से संबंध स्थापित करते हुए कहा गया है कि आत्मा का प्रथम अंश अर्थात वैश्वानर का स्थान जाग्रत अवस्था है। आत्मा के द्वितीय अंश तैजस का स्थान स्वप्नावस्था है। आत्मा के तृतीय अंश अर्थात प्राज्ञ का स्थान सुषुप्ति में बताया गया है। आत्मा के चतुर्थ अंश को अवर्णननीय बताते हुए इसका स्थान तुरीयावस्था में निर्धारित किया गया है।

आत्मा के इन चारों अंशों में से प्रथम अंश की तृप्ति स्थूल पदार्थों से, द्वितीय अंश की सूक्ष्म पदार्थों से एवं तृतीय अंश की तृप्ति आनन्द से बताई गई है। आत्मा के चतुर्थ अंश का वर्णन अदृष्ट, अग्राह्य, निर्लेप के रूप में किया गया है। माण्डूक्य उपनिषद में यह कहा गया है कि आत्मा के चतुर्थ अंश का शब्दों में वर्णन कर पाना संभव नहीं है। यह अवस्था पंचतत्वों के परे है। इस अवस्था को विद्वजनों ने "नान्तःप्रज्ञम्" भी कहा है। कठोपनिषद में आत्मा, शरीर, बुद्धि, मन एवं इन्द्रियों के संबंध को रथ के रूपक द्वारा अत्यन्त उत्कृष्ट ढंग से स्पष्ट करते हुए यह कहा गया है कि–

आत्मानम् रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।

अर्थात् आत्मा रथ के स्वामी के समान है, शरीर रथ के समान है, बुद्धि सारथी के समान है तथा मन लगाम के समान है जो कि इन्द्रिय रूपी अश्वों से सम्बद्ध है। इस रूपक द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है कि इन्द्रियों के अभाव में शरीर उपयुक्त रूप से कार्य नहीं कर सकता। इस कारण से इन्द्रियों को स्वच्छन्द छोड़ देना उपयुक्त नहीं है क्योंकि अश्वरूपी इन्द्रियां अनियन्त्रित होने पर रथ के स्वामी का अनिष्ट कर सकती है। अतः इन्द्रियों पर मन रूपी लगाम का होना आवश्यक है। बुद्धि का कार्य उस सारथी के समान है जो मन रूपी लगाम को उचित दिशा प्रदान करता है। इस प्रकार शरीर, इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि से संयुक्त होने पर आत्मा, संकल्प–विकल्प संबंधी मानसिक क्रियाओं को पूर्ण करती है।

भारतीय परंपरा में इन्द्रियों, मन, बुद्धि और आत्मा में एक कमिक उत्कर्ष प्रदर्शित किया गया है। इन्द्रियाँ स्थूल जगत से सम्बन्धित हैं। इन्द्रियाँ जिन विषयों से सम्बद्ध हैं वे इन्द्रियों से भी सूक्ष्म हैं, यथा – शब्द, स्पर्श, रस, रूप एवं गंध इत्यादि। मन इन्द्रियों से भी सूक्ष्म है। मन से ही संकल्प का प्रारंभ होता है। मन से भी सूक्ष्म बुद्धि है जो निर्णय क्षमता से युक्त है। इन सभी से सूक्ष्म आत्मा है। शरीर तथा आत्मा के मध्य के सम्बन्ध में इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि की उपस्थिति आवश्यक है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि आत्म संबंधी भारतीय दृष्टिकोण अनेक स्थलों पर पाश्चात्य दृष्टिकोण से साम्य रखता है। परंतु साम्यता रखते हुए भी भारतीय दृष्टिकोण का क्षेत्र पाश्चात्य दृष्टिकोण की अपेक्षा व्यापक है। आत्म संबंधी पाश्चात्य विचारधारा का मत मनुष्य के जीवशास्त्रीय तथा शारिरिक पक्ष से ही संबंध रखता है। यह दृष्टिकोण उद्दीपन–अनुक्रिया पर आधारित सिद्धान्तों को प्रमुखता प्रदान करते हुए मनुष्य के व्यवहार एवं व्यक्तित्व की व्याख्या करने का प्रयत्न करता है। इस आधार पर निर्मित नियम एवं सिद्धान्त जीव के उसके वातावरण के साथ अनुकूलन करने तक ही सीमित रहते हैं। इन सिद्धान्तों द्वारा पशुजगत की व्याख्या तो सफलतापूर्वक की जा सकती है। परंतु मानव व्यवहार की संपूर्ण व्याख्या में ये सिद्धान्त पूर्णरुपेण सत्य सिद्ध नहीं होते। क्योंकि मनुष्य में एसी शक्तियाँ भी अन्तर्निहित हैं जो जीवशास्त्रीय तथा शरीरशास्त्रीय सिद्धान्तों की सीमाओं से परे हैं। इनके द्वारा वह न केवल अपने वातावरण से अनुकूलन करने में ही समर्थ होता है अपितु उसका रुप परिवर्तित करने में भी सक्षम होता है। आत्म संबंधी भारतीय दृष्टिकोण व्यक्तित्व के विकास के महत्वपूर्ण पक्षों से संबंधित है। इसकी पुष्टि पंचकोषों की अवधारणा से होती है। वस्तुतः अन्नमय कोष शारिरिक विकास से, प्राणमय कोष भावनात्मक विकास से, मनोमय कोष मानसिक विकास (मन के विकास) से तथा विज्ञानमय कोष बौद्धिक विकास से आनन्दमय कोष आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास से संबंधित है। वैदिक कालीन शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण की पृष्ठभूमि में पंचकोषों की अवधारणा का स्पष्ट प्रभाव प्रदर्शित होता है। भारतीय दृष्टिकोण शरीर, प्राण, मन, अहं, चेतना तथा बुद्धि के अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या इस प्रकार करता है जिससे कि मनुष्य भौतिकता से ऊपर उठकर स्वयं में निहित दिव्य चेतना का साक्षात्कार कर सके। मनुष्य की इन विशेषताओं का ज्ञान भारतीय परंपरा में निहित आत्म तत्व विवेचना में प्राप्त होता है। इसका ज्ञान न केवल वैयक्तिक विकास हेतु ही उपयोगी है अपितु संपूर्ण मानव जाति के विकास के लिए निर्विवाद रुप से सत्य सिद्ध होता है।

सन्दर्भ

1.ईशादि नौ उपनिषद, शांकरभाष्यार्थ, गोरखपुर : गीता प्रेस।

2.उपाध्याय, बलदेव (1997), भारतीय दर्शन, वाराणसी : शारदा मंदिर।

3.उपाध्याय, बलदेव (2000), भारतीय धर्म और दर्शन, वाराणसी : चौखम्भा पब्लिशर्स।

4.ओड, एल. के. (2006), शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

5.गीता प्रेस गोरखपुर, (सम्वत् 2061), कल्याण, उपनिषद अंक।

6.गौतम, चिन्तामणि (2009), श्वेताश्वतरोपनिषद् तथा कठोपनिषद् में योग विद्या (एक समीक्षात्मक अध्ययन), अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, मानव चेतना एवं योग विभाग, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार।

7.घोड़ेकर, पूजा (2011), उपनिषद वांगमय में ब्रह्म एवं आत्मतत्व का विचार, परमिता त्रैमासिक शोध पत्रिका, वर्ष–3, अंक–4, पृ. 91–92।

8.चन्द्रमणि (2005), उपनिषद साहित्य में शिक्षा व्यवस्था : एक अनुशीलन, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वेद विभाग, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार।

9.जाटव, डी. आर. (2006), नीतिशास्त्र के प्रमुख सिद्धान्त, जयपुर : मलिक एण्ड कम्पनी।

10.जायसवाल, सीताराम (2010), भारतीय मनोविज्ञान और शिक्षा, तृतीय संस्करण, दिल्ली : आर्य बुक डिपो।

11.झा, सोमलता (2008), औपनिषदिक प्राणविद्या का वैज्ञानिक विवेचन, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, मानव चेतना एवं योग विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय हरिद्वार।

12.पाण्डेय, रामशकल (2003), शिक्षा दर्शन, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।

13.पूजा (2007), उपनिषदों में उपास्य एवं उपासना, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार।

14.प्रसाद, राजेद्र (2006), दर्शनशास्त्र की रुपरेखा, दिल्ली : मोतीलाल बनारसी दास।

15.प्रियदर्शी, संतोष (2011), भारतीय दर्शन में मोक्ष की अवधारणा, परमिता त्रैमासिक शोध पत्रिका, वर्ष–3, अंक–4, पृ 55–57।

16.भावे, विनोबा (1955), शिक्षण विचार, वाराणसी : अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ प्रकाशन।

17.रंगनाथानंद, स्वामी (2001), उपनिषदों का संदेश, नागपुर : रामकृष्ण मठ।

18.राधाकृष्णन, एस. (1986), भारतीय दर्शन–1, दिल्ली : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट।

19.राधाकृष्णन, एस. (1970), भारतीय दर्शन–2, दिल्ली : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट।

20.वेदालंकार, जयदेव (2001), उपनिषदों का तत्वज्ञान, दिल्ली : भारतीय विद्या प्रकाशन।

21.शर्मा, उमाशंकर (2006), सर्वदर्शन संग्रह, विद्याभवन, संस्कृतग्रंथमाला, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन।

22.शर्मा, बी. डी. (1978), शंकराचार्य का शिक्षा दर्शन, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, शिक्षा संकाय, मेरठ विश्वविद्यालय।

23.शर्मा, राममूर्ति (2007), वेदान्तसारः चतुर्थ संस्करण, वाराणसी : चौखम्भा पब्लिशर्स।

24.शास्त्री, उदयवीर (1991), वेदान्त दर्शन का इतिहास, दिल्ली : गोविंदराय हासानन्द।

25.शास्त्री, जगदीश (2006), उपनिषद संग्रह, दिल्ली : मोतीलाल बनारसी दास, ।

26.श्रीवास्तव, डी. एन. (2010), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नवम संस्करण, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन।

27.संपूर्णानन्द (1989), समिधा, उत्तर प्रदेश : सूचना एवं जनसंपर्क विभाग।
28.सांकृत्यायन, राहुल (1998), दर्शन दिग्दर्शन, इलाहाबाद : किताब महल।
29.सिंह, ओमपाल (2012), उपनिषद सकारात्मक आर्थिक चिंतन, गुरूकुल शोध भारती षाण्मासिकी शोध पत्रिका, अंक–18, पृ. 180–186।
30.सिंह, श्री भगवान (2011), वर्तमान शिक्षा का यथार्थ, गवेषणा अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान, भाषा शिक्षण तथा साहित्य चिंतन की पत्रिका, अंक–99, पृ. 39–44।

ललित मोहन जोशी
शोध छात्र, शिक्षा संकाय, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, एस. एस. जे. परिसर, अल्मोड़ा।

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- Google Scholar
- EBSCO
- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Indian Streams Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.net